UP Board Solutions for Class 10 Sanskrit Chapter 2 उद्भिज्ज परिषद् (गद्य – भारती)

परिचय

वृक्ष मनुष्य के सबसे बड़े हितैषी हैं और मनुष्य ने सबसे अधिक अत्याचार भी वृक्षों पर ही किया है। प्रस्तुत पाठ में यह कल्पना की गयी है कि यदि मनुष्यों द्वारा किये जा रहे अत्याचार के विरोध में वृक्ष सभा करें तो उनके सभापति का भाषण कैसा होगा? वह मनुष्यों की भाषा में वृक्षों को किस रूप में सम्बोधित करेगा? प्रस्तुत पाठ में अश्वत्थ (पीपल) को वृक्षों और लताओं की सभा का सभापति बनाया गया है, जिसने मनुष्यों की हिंसा-वृत्ति और लालची स्वभाव के कारण मनुष्य को पशुओं से ही नहीं तिनकों से भी निकृष्ट सिद्ध किया है और अपनी बात की पुष्टि में तर्क और प्रमाण भी दिये हैं।

पाठ-सारांश [2007, 10, 11, 14]

उद्भिज्जों की सभा में अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष वृक्षों और लताओं को सम्बोधित करते हुए मानवों की निकृष्टता बता रहा है –

मानव की हिंसा-वृत्ति जीवों की सृष्टि में मनुष्य के समान धोखेबाज, स्वार्थी, मायावी, कपटी और हिंसक प्राणी कोई नहीं है; क्योंकि जंगली पशु तो मात्र पेट भरने के लिए हिंसाकर्म करते हैं। पेट भर जाने पर वे वन-वन घूमकर दुर्बल पशुओं को नहीं मारते, जब कि मानव की हिंसावृत्ति की सीमा का अन्त नहीं है। वह अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए अपनी स्त्री, पुत्र, मित्र, स्वामी और बन्धु को भी खेल-खेल में मार डालता है। वह मन बहलाने के लिए जंगल में जाकर निरीह पशुओं को मारता है। उसकी पशु-हिंसा को देखकर तो जड़ वृक्षों का भी हृदय फट जाता है। दूसरे पशुओं की भक्ष्य वस्तुएँ नियमित हैं। मांसभक्षी पशु मांस ही खाते हैं, तृणभक्षी तृण खाकर ही जीवन-निर्वाह करते हैं, परन्तु मनुष्यों में इस प्रकार के भक्ष्याभक्ष्य पदार्थों के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं हैं।

मानव का असन्तोष अपनी अवस्था में सन्तोष न प्राप्त करके मनुष्य-जाति स्वार्थ साधन में निरत है। वह धर्म, सत्य, सरलता आदि मनुष्योचित व्यवहार को त्यागकर झूठ, पापाचार और परपीड़न में लगी हुई है। उनकी विषय-लालसा बढ़ती ही रहती है, जिससे उन्हें शान्ति एवं सुख नहीं मिल पाता है। अपनी अवस्था में सन्तुष्ट रहने वाले पशुओं से मानव भला कैसे श्रेष्ठ हो सकता है; क्योंकि वह घोर-से-घोर पापकर्म करने में भी नहीं हिचकिचाता।

पशु से निकृष्ट और तृणों से भी निस्सार मानव मनुष्य केवल पशुओं से निकृष्ट ही नहीं है, वरन् वह तृणों से भी निस्सार है। तृण आँधी-तूफान के साथ निरन्तर संघर्ष करते हुए वीर पुरुषों की तरह शक्ति क्षीण होने पर ही भूमि पर गिरते हैं। वे कायर पुरुषों की तरह अपना स्थान छोड़कर नहीं भागते। लेकिन मनुष्य मन में भावी विपत्ति की आशंका करके कष्टपूर्वक जीते हैं और प्रतिकार का उपाय सोचते रहते हैं। निश्चित ही मनुष्ये पशुओं से भी निकृष्ट और तृणों से भी निस्सार है। विधाता ने उसे बनाकर अपनी बुद्धि की कैसी श्रेष्ठता दिखायी है? तात्पर्य यह है कि मनुष्य को बनाकर विधाता ने कोई बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य नहीं किया है।

इस प्रकार अश्वत्थ (सभापति) ने हेतु और प्रमाणों द्वारा विशद् व्याख्यान देकर वृक्षों की सभा को विसर्जित कर दिया।

गद्यांशों का ससन्दर्भ अनुवाद

(1) अथ सर्वविधविटपिनां मध्ये स्थितः सुमहान् अश्वत्थदेवः वदति-भो भो वनस्पतिकुलप्रदीपा महापादपाः, कुसुमाकोमलदन्तरुचः लताकुलललनाश्च। सावहिताः शृण्वन्तु भवन्तः। अद्य मानववार्तव अस्माकं समालोच्यविषयः। सर्वासु सृष्टिधारासु निकृष्टतमा मानवा सृष्टिः, जीवसृष्टिप्रवाहेषु मानवा इव परप्रतारका, स्वार्थसाधनापरा, मायाविनः, कपटव्यवहारकुशला, हिंसानिरता जीवा न विद्यन्ते। भवन्तो नित्यमेवारण्यचारिणः सिंहव्याघ्रप्रमुखान् हिंस्रत्वभावनया प्रसिद्धान् श्वापदान् अवलोकयन्ति प्रत्यक्षम्। ततो भवन्त एव सानुनयं पृच्छ्यन्ते, कथयन्तु भवन्तो यथातथ्येन किमेते हिंसादिक्रियासु मनुष्येभ्यो भृशं गरिष्ठाः? श्वापदानां हिंसाकर्म जठरानलनिर्वाणमात्रप्रयोजनकम्। प्रशान्ते तु जठारानले, सकृद् उपजातायां स्वोदरपूर्ती, न हि ते करतलगतानपि हरिणशशकादीन् उपघ्नन्ति। न वा तथाविध दुर्बलजीवघातार्थम् अटवीतोऽटवीं परिभ्रमन्ति। [2007]

अथ सर्वविध ..... भृशं गरिष्ठाः **[2008]**
सर्वासु सृष्टिधारासु ..... भृशं गरिष्ठाः **[2007]**

शब्दार्थ अथ = इसके बाद विटपिनाम् = वृक्षों के अश्वत्थदेवः = पीपल देवता। कुसुमकोमलदन्तरुचः = फूलों के समान कोमल दाँतों की कान्ति वाली। लताकुलललनाश्च = और बेलों के वंश की नारियों। सावहिताः = सावधानी से। मानववातैव = मनुष्य की बात ही। समालोच्यविषयः = आलोचना करने योग्य विषय। निकृष्टतमाः = निकृष्टतम, सर्वाधिक निम्न। परप्रतारकाः = दूसरों को ठगने वाले। मायाविनः = कपट (माया) से भरे हुए। हिंसानिरताः = हत्या करने में लगे हुए। नित्यमेवारण्यचारिणः (नित्यम् + एव + अरण्यचारिणः) = नित्य ही वन में घूमने वालों को। श्वापदान् = हिंसक पशुओं को। अवलोकयन्ति = देखते हैं। सानुनयम् = विनयपूर्वका पृच्छ्य न्ते = पूछे जा रहे हैं। यथातथ्येन = वास्तविक रूप में। भृशम् = अत्यधिक गरिष्ठाः = कठोर। जठरानलनिर्वाणमात्रप्रयोजनकम् = पेट की क्षुधा शान्त करने मात्र के प्रयोजन वाला। सकृत् = एक बार। करतलगतानपि = हाथ में आये हुओं को भी। उपघ्नन्ति = मारते हैं। अटवीतः अटवीम् = जंगल से जंगल में। परिभ्रमन्ति = घूमते हैं।

सन्दर्भ प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक 'संस्कृत' के गद्य-खण्ड 'गद्य-भारती' में संकलित 'उदिभज्ज-परिषद्' शीर्षक पाठ से उद्धृत है।

[**संकेत** इस पाठ के शेष सभी गद्यांशों के लिए यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा।]

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में पीपल के वृक्ष द्वारा मनुष्यों की निकृष्टता का वर्णन किया जा रहा है।

अनुवाद इसके बाद सभी प्रकार के वृक्षों के मध्य में स्थित अत्यन्त विशाल पीपल देवता कहता है कि हे वनस्पतियों के कुल के दीपकस्वरूप बड़े वृक्षो! फूलों के समान कोमल दाँतों की कान्ति वाली लतारूपी कुलांगनाओ! आप सावधान होकर सुनें। आज मानवों की बात ही हमारी आलोचना का विषय है। सृष्टि की सम्पूर्ण धाराओं में मानवों की सृष्टि सर्वाधिक निकृष्ट है। जीवों के सृष्टि प्रवाह में मानवों के समान दूसरों को धोखा देने वाले, स्वार्थ की पूर्ति में लगे हुए, मायाचारी, कपट-व्यवहार में चतुर और हिंसा में लीन जीव नहीं हैं। आप सदैव ही जंगल में घूमने वाले सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक भावना से प्रसिद्ध हिंसक जीवों को प्रत्यक्ष देखते हैं। इसलिए आपसे ही विनयपूर्वक पूछते हैं कि वास्तविक रूप में आप ही बताएँ, क्या हिंसा आदि कार्यों में ये मनुष्यों से अधिक कठोर हैं? हिंसक जीवों का हिंसा-कर्म पेट की भूख मिटानेमात्र के प्रयोजन वाला है। पेट की क्षुधाग्नि के शान्त हो जाने पर, एक बार अपने पेट के भर जाने पर, वे हाथ में आये हुए हिरन व खरगोश आदि को भी नहीं मारते हैं और न ही उस प्रकार के कमजोर जीवों को मारने के लिए एक जंगल से दूसरे जंगल में घूमते रहते हैं।

https://www.evidyarthi.in/

(2) मनुष्याणां हिंसावृत्तिस्तु निरवधिः निरवसाना च। यतोयत आत्मनोऽपकर्षः समाशङ्क्यते तत्र-तत्रैव मानवानां हिंसावृत्तिः प्रवर्तते। स्वार्थसिद्धये मानवाः दारान् मित्रं, प्रभु, भृत्यं, स्वजनं, स्वपक्षं, चावलीलायें उपघ्नन्ति। पशुहत्या तु तेषामाक्रीडनं, केवलं चित्तविनोदाय महारण्यम् उपगम्य ते यथेच्छ निर्दयं च पशुघातं कुर्वन्ति। तेषां पशुप्रहारव्यापारम् आलोक्य जडानामपि अस्माकं विदीर्यते हृदयम्, अन्यच्च पशूनां भक्ष्यवस्तूनि प्रकृत्या नियमितान्येव न हि पशवो भोजनव्यापारे प्रकृतिनियममुल्लङ्घयन्ति। तेषु ये मांसभुजः ते मांसमपहाय नान्यत् आकाङ्क्षन्ति। ये पुनः फलमूलाशिनस्ते तैरेव जीवन्ति। मानवानां न दृश्यते तादृशः कश्चिन्निर्दिष्टो नियमः। [2007, 14, 15)

पशुहत्या तु ..... नियममुल्लङ्घयन्ति। **[2007]**
मनुष्याणां हिंसावृत्तिस्तु ..... प्रकृत्या नियमितान्येव। **[2010]**
स्वार्थसिद्धये मानवः ..... निर्दिष्टो नियमः।

शब्दार्थ निरवधिः = सीमारहित निरवसाना = समाप्तिरहित। यतोयतः = जहाँ-जहाँ से। अपकर्षः = पतन। शङ्क्यते = शंका करता है। तत्र-तत्रैव = वहाँ-वहाँ ही। प्रवर्तते = बढ़ती है। दारान् = पत्नियों को। प्रभुम् = स्वामी को भृत्यम् = सेवक को। लीलायै = मनोरंजन के लिए। उपघ्नन्ति = मार देते हैं। आक्रीडनम् = खेल। चित्तविनोदाय =मन के बहलाव के लिए। उपगम्य = पहुँचकर। पशु-धातम् = पशु-हत्या। आलोक्य = देखकर विदीर्यते = फटता है। अन्यच्च (अन्यत् + च) = और दूसरी ओर। मांसभुजः = मांस खाने वाले। अपहाय = छोड़कर। नान्यत् = अन्य नहीं। फलमूलाशिनस्ते (फल + मूल + अशिनः + ते) = फल और जड़ खाने वाले थे। तैरेव (तैः + एव) = उनसे ही।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में मनुष्यों की हिंसावृत्ति की असीमता और अनियमितता का वर्णन किया गया है।

अनुवाद मनुष्यों की हिंसावृत्ति तो सीमारहित और समाप्त न होने वाली है। मनुष्य जिस-जिससे अपने पतन की आशंका करता है, वहीं-वहीं मनुष्यों की हिंसावृत्ति प्रारम्भ हो जाती है। स्वार्थ पूरा करने के लिए मनुष्य स्त्री, मित्र, स्वामी, सेवक, अपने सम्बन्धी और अपने पक्ष वाले को अत्यधिक सरलता से मार देता है। पशुओं की हिंसा तो उनका खेल है। केवल मनोरंजन के लिए बड़े जंगल में जाकर वे इच्छानुसार निर्दयता से पशुओं को मारते हैं। उनके पशुओं को मारने के कार्य को देखकर हम जड़ पदार्थों का भी हृदय फट जाता है। दूसरे, पशुओं की खाद्य वस्तुएँ स्वभाव (प्रकृति) से नियमित ही हैं। निश्चय ही पशु भोजन के कार्य में प्रकृति के नियम का उल्लंघन नहीं करते हैं। उनमें जो मांसभोजी हैं, वे मांस को छोड़कर दूसरी वस्तु नहीं चाहते हैं। और जो फल-मूल खाने वाले हैं, वे उन्हीं से जीवित रहते हैं। मनुष्यों का उस प्रकार का कोई निश्चित नियम नहीं दिखाई पड़ता है।

(3) स्वावस्थायां सन्तोषमलभमाना मनुजन्मानः प्रतिक्षणं स्वार्थसाधनाय
सर्वात्मना प्रवर्तन्ते, न धर्ममनुधावन्ति, न सत्यमनुबध्नन्ति तृणवदुपेक्षन्ते स्नेहम्,
अहितमिव परित्यजन्ति आर्जवम्, किञ्चिदपिलज्जन्ते अनृतव्यवहारात्, न
स्वल्पमपि बिभ्यति पापाचरेभ्यं, न हि क्षणमपि विरमन्ति परपीडनात्। यथा यथैव स्वार्थसिद्धर्घटते परिवर्धते विषयपिपासा। निर्धनः शतं कामयते, शती दशशतान्यभिलषति, सहस्राधिपो लक्षमाकाङ्क्षति, इत्थं क्रमश एव मनुष्याणामाशा वर्धते। विचार्यतां तावत्, ये खलु स्वप्नेऽपि तृप्तिसुखं नाधिगच्छन्ति, सर्वदैव नवनवाशाचित्तवृत्तयो भवन्ति, सम्भाव्यते तेषु कदाचिदपि स्वल्पमात्रं शान्तिसुखम्? येषु क्षणमपि शान्तिसुखं नाविर्भवति ते खलु दुःखदुःखेनैव समयमतिवाहयन्ति इत्यपि किं वक्तव्यम्? कथं वा निजनिजावस्थायामेव तृप्तिमनुभवद्भ्यः पशुभ्यस्तेषां श्रेष्ठत्वम्? यद्धि विगर्हितं कर्म सम्पादयितुं पशवोऽपि लज्जन्ते तत्तु मानवानामीषत्करम् । नास्तीह किमपि अतिघोररूपं महापापकर्म यत्कामोपहतचित्तवृत्तिभिः मनुष्यैः नानुष्ठीयते। निपुणतरम् अवलोकयन्नपि अहं न तेषां पशुभ्यः कमपि उत्कर्षम् परमतिनिकृष्टत्वमेव अवलोकयामि।

स्वावस्थायां सन्तोषम् ..... परपीडनात्। **[2008]**
स्वावस्थायां सन्तोषम् ..... मनुष्याणाम् आशा वर्धते। **[2011, 14]**

शब्दार्थ अलभमाना = न प्राप्त करते हुए। मनुजन्मानः = मनुष्य योनि में जन्मे। सर्वात्मना = पूरी तौर से। प्रवर्तन्ते = लगे रहते हैं। अनुबध्नन्ति = अनुसरण करते हैं। तृणवदुपेक्षन्ते = तिनके के समान उपेक्षा करते हैं। आर्जवम् = सरलता को। अपलज्जन्ते = लज्जित होते हैं। अनृत = झूठे, असत्य। बिभ्यति = डरते हैं। विरमन्ति = रुकते हैं। घटते = पूरी होती है। परिवर्धते = बढ़ती है। कामयते = चाहता है। लक्षम् = लांख को। आकाङ्क्षति = चाहता है। विचार्यताम् = विचार कीजिए। नाधिगच्छन्ति (न + अधिगच्छन्ति) = नहीं प्राप्त करते हैं। कदाचिदपि (कदाचिद् + अपि) = कभी भी। आविर्भवति = उत्पन्न होता है। अतिवाहयन्ति = व्यतीत करते हैं। विगर्हितम् = निन्दित। सम्पादयितुम् = पूरा करने के लिए। ईषत्करम् = तुच्छ कार्य। कामोपहतचित्तवृत्तिभिः = अभिलाषा से दूषित मनोवृत्ति वालों के द्वारा अनुष्ठीयते = किया जाता है। अवलोकयन् = देखते हुए। उत्कर्षम् = श्रेष्ठता को। परमतिनिकृष्टत्वमेव = अपितु अधिक नीचता को ही। अवलोकयामि = देखता हूँ।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में पीपल द्वारा मनुष्यों के जघन्य कृत्यों को बताया जा रहा है।

अनुवाद अपनी अवस्था में सन्तोष को न प्राप्त करने वाले मनुष्य प्रति क्षण स्वार्थसिद्धि के लिए पूरी तरह से लगे रहते हैं, धर्म के पीछे नहीं दौड़ते हैं, सत्य का अनुसरण नहीं करते हैं, स्नेह की तृण के समान उपेक्षा करते हैं, सरलता को अहित के समान त्याग देते हैं, झूठे व्यवहार से कुछ भी लज्जित नहीं होते हैं, पापाचारों से थोड़ा भी नहीं डरते हैं, दूसरों को पीड़ित करने से क्षणभर भी नहीं रुकते हैं। जैसे-जैसे स्वार्थसिद्धि पूर्ण होती जाती है, विषयों की प्यास बढ़ती जाती है। धनहीन सौ रुपये की इच्छा करता है, सौ रुपये वाला हजार रुपये चाहता है, हजार रुपये का स्वामी लाख रुपये चाहता है, इस प्रकार क्रमशः मनुष्य की इच्छा बढ़ती जाती है। विचार तो कीजिए, जो निश्चित रूप से स्वप्न में भी तृप्ति के सुख को प्राप्त नहीं करते हैं, सदा ही नयी-नयी इच्छा से जिनका मन भरा रहता है, क्या उनमें कभी भी थोड़ी भी शान्ति के सुख की सम्भावना होती है? जिनमें क्षणभर भी शान्ति के सुख का उदय नहीं होता है, वे निश्चय ही महान् दुःखों में अपना समय बिताते हैं। इस विषय में भी क्या कहना चाहिए? अपनी-अपनी अवस्था में ही तृप्ति का अनुभव करने वाले पशुओं से उनकी श्रेष्ठता कैसे हो सकती है? जिस निन्दित कार्य को करने के लिए पशु भी लज्जित होते हैं, वह मनुष्यों के लिए तुच्छ काम है। इस संसार में अत्यन्त भयानक ऐसा कोई बड़ा पापकर्म नहीं है, जो लालसा से दूषित चित्तवृत्ति वाले मनुष्यों के द्वारा न किया जाता हो। अच्छी तरह देखता हुआ भी मैं पशुओं से उनके किसी उत्कर्ष को नहीं, अपितु अत्यन्त नीचता को ही देखता हूँ।

(4) न केवलमेते पशुभ्यो निकृष्टास्तृणेभ्योऽपि निस्सारा इव। तृणानि खलु वात्यया सह स्वशक्तितः अभियुध्य वीरपुरुषा इव शक्तिक्षये क्षितितले पतन्ति, न तु कदाचित्, कापुरुषा इव स्वस्थानम् अपहाय प्रपलायन्ते। मनुष्याः पुनः स्वचेतसाग्रत एव भविष्यत्काले सङ्घटिष्यमाणं कमपि विपत्पातम् आकलय्य दुःखेन समयमतिवाहयन्ति, परिकल्पयन्ति च पर्याकुला बहुविधान् प्रतीकारोपायान्, येन मनुष्यजीवने शान्तिसुखं मनोरथपथादपि क्रान्तमेव। अथ ये तृणेभ्योऽप्यसाराः पशुभ्योऽपि निकृष्टतराश्च, तथा च तृणादिसृष्टेरनन्तरं तथाविधं जीवनिर्माणं विश्वविधातुः कीदृशं बुद्धिप्रकर्षं प्रकटयति।

इत्येवं हेतुप्रमाणपुरस्सरं सुचिरं बहुविधं विशदं च व्याख्याय सभापतिरश्वत्थदेव उद्भिज्जपरिषदं विसर्जयामास।।

न केवलमेते। ..... प्रपलायन्ते।
तृणानि खलु ..... पथादपि क्रान्तमेव। **[2007]**

https://www.evidyarthi.in/

शब्दार्थ निकृष्टतरास्तृणेभ्योऽपि =अधिक नीच हैं, तिनकों से भी। निस्साराः = सारहीन| वात्यया सह = आँधी के साथ। स्वशक्तितः = अपनी शक्ति से। अभियुध्य = युद्ध करके। शक्तिक्षये = शक्ति के नष्ट हो जाने पर। कापुरुषाः = कायर। अपहाय = छोड़कर। प्रपलायन्ते = भागते हैं। सङ्कटिष्यमाणम् = भविष्य में घटित होने वाले। विपत्पातम् = विपत्ति के आगमन को। आकलय्य = विचार करके। अतिवाहयन्ति = व्यतीत करते हैं। प्रतीकारोपायान् = रोकने के उपायों को। मनोरथपथादपि = इच्छा के मार्ग अर्थात् मन से भी। क्रान्तम् = हट गया। विश्वविधातुः = संसार की रचना करने वाले ब्रह्माजी के बुद्धिप्रकर्षम् = बुद्धि की श्रेष्ठता। प्रकटयति = प्रकट करता है। इत्येवम् = इस प्रकार हेतुप्रमाणपुरस्सरं = कारण के प्रमाणों को सामने रखकर। सुचिरं =अधिक समय तक विशदम् = विस्तृत, विस्तारपूर्वक व्याख्याय = व्याख्यायित करके विसर्जयामास = समाप्त कर दी।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में मानव को पशुओं से ही नहीं, अपितु तृणों से भी निकृष्ट बताकर मनुष्य की निस्सारता का दिग्दर्शन कराया गया है।

अनुवाद ये केवल पशुओं से ही निकृष्ट नहीं हैं, तृणों से भी सारहीन हैं। तिनके निश्चय ही आँधी के साथ अपनी शक्ति से युद्ध करके वीर पुरुषों की तरह शक्ति के नष्ट हो जाने पर ही पृथ्वी पर गिरते हैं, कभी भी कायर पुरुषों की तरह अपने स्थान को छोड़कर नहीं भागते हैं। मनुष्य अपने चित्त में पहले ही भविष्यकाल में घटित होने वाली किसी विपत्ति के आने (पड़ने) का विचार करके कष्ट से समय बिताते हैं और व्याकुल होकर अनेक प्रकार के उपायों को सोचते हैं, जिससे मनुष्य जीवन में शान्ति और सुख मनोरथ के रास्ते से भी हट जाता है। इस प्रकार जो तृणों से भी सारहीन हैं और पशुओं से भी नीच हैं तथा तृणादि की सृष्टि के बाद उस प्रकार के जीव का निर्माण करना, संसार के निर्माता की किस प्रकार की बुद्धि की श्रेष्ठता को प्रकट करता है? इस प्रकार हेतु और प्रमाण देकर बहुत देर तक अनेक प्रकार से विशद् व्याख्या करके सभापति पीपल ने वृक्षों की सभा को विसर्जित (समाप्त) कर दिया।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.
मनुष्यों की हिंसा-वृत्ति कैसी होती है?
उत्तर :
मनुष्यों की हिंसावृत्ति की सीमा का कोई अन्त नहीं है। मनुष्य स्वार्थसिद्धि के लिए स्त्री, पुत्र, स्वामी और बन्धु को भी अनायास मार डालता है और केवल मन बहलाने के लिए जंगल में जाकर पशुओं को मारता है। इनकी पशु-हिंसा को देखकर तो जड़ वृक्षों का हृदय भी फट जाता है।

प्रश्न 2.
मनुष्य को किनसे निकृष्ट और किनसे निस्सार बताया गया है?
उत्तर :
मनुष्य केवल पशुओं से ही निकृष्ट नहीं है, वरन् वह तृणों से भी निस्सार है। तृण आँधी के साथ निरन्तर लड़ते हुए वीर पुरुषों की तरह शक्ति क्षीण होने पर ही भूमि पर गिरते हैं। वे कायर पुरुषों की तरह अपना स्थान छोड़कर नहीं भागते। लेकिन मनुष्य पहले ही मन में भावी विपत्ति की आशंका करके कष्टपूर्वक जीते हैं और उसके प्रतिकार का उपाय सोचते रहते हैं।

प्रश्न 3.
'उद्भिज्ज-परिषद्' पाठ के आधार पर वृक्षों के महत्त्व पर आलेख लिखिए। **[2012]**
उत्तर :

[संकेत प्रस्तुत प्रश्न का उत्तर 'जीवनं निहितं वने" नामक पाठ के आधार पर लिखा जा सकता है, प्रस्तुते पाठ के आधार पर नहीं। इस प्रश्न का उत्तर 'जीवनं निहितं वने' नामक पाठ से ही पढ़े।]

प्रश्न 4.
मनुष्य पशुओं से निकृष्ट क्यों है?
उत्तर :
मनुष्य पशुओं से निकृष्ट इसलिए है, क्योंकि पशु तो मात्र अपना पेट भरने के लिए हिंसा-कर्म करते हैं। लेकिन मनुष्य तो पेट भर जाने पर मात्र मनोरंजन के लिए वन-वन घूमकर दुर्बल पशुओं को मारता रहता है।

प्रश्न 5.
वृक्षों की सभा का सभापतित्व किसने किया? उसने मनुष्यों में क्या-क्या दोष गिनाये हैं?
या
वृक्षों की सभा में सभापति कौन था? **[2010, 11, 12, 14]**
उत्तर :
वृक्षों की सभा को सभापतित्व अश्वत्थ (पीपल) के एक विशाल वृक्ष ने किया। उसने कहा कि मनुष्य अपनी अवस्था से सन्तुष्ट न रहकर सदैव स्वार्थ-साधन में लगा रहता है। वह सत्य, धर्म, सरलता आदि व्यवहारों को छोड़कर झूठ, पापाचार, परपीड़न आदि में लगा रहता है। उसकी विषय-लालसा निरन्तर बढ़ती ही रहती है, जिससे उसे शान्ति व सुख की प्राप्ति नहीं होती। वह घोर-से-घोर पापकर्म करने में भी नहीं हिचकिचाता। ये ही दोष वृक्षों की सभा में सभा के सभापति द्वारा गिनाये गये।

प्रश्न 6.
हिंसक जीवों की हिंसा और मनुष्य की हिंसा में क्याअन्तर है? भोजन के विषय में पशु-पक्षियों के नियम बताइए। **[2007]**
या
मनुष्यों एवं पशुओं के हिंसा-कर्म का क्या प्रयोजन है? **[2012, 15]**
उत्तर :
हिंसक जीवों की हिंसा केवल पेट की भूख शान्त करने के लिए ही होती है। भूख शान्त हो जाने पर वे हिंसा नहीं करते। लेकिन मनुष्य अपनी भूख शान्त करने के लिए तो हिंसा करता ही है अपितु उसके बाद वह मनोरंजन के लिए भी हिंसा करता है। हिंसा तो उसके लिए खेल के समान है। भोजन के विषय में पशु-पक्षियों के निश्चित नियम हैं। मांसाहारी पशु मांस को छोड़कर दूसरी वस्तु नहीं खाते और फल-मूल खाने वाले उसी को खाते हैं, वे मांस नहीं खाते।

प्रश्न 7.
वृक्षों की सभा का विषय क्या है? **[2011,14]**
उत्तर :
वृक्षों की सभा का विषय मनुष्यों की हिंसा-वृत्ति और उनका लालची स्वभाव है। इस कारण वृक्षों ने मनुष्यों को पशुओं से ही नहीं वरन् तिनकों से भी निकृष्ट सिद्ध किया है।

प्रश्न 8.
उद्भिज्ज-परिषद् में निकृष्टतम जीव किसको माना गया है? **[2010]**
उत्तर :

https://www.evidyarthi.in/

‘उद्भिज्ज-परिषद्” पाठ में निकृष्टतम जीव मनुष्य को माना गया है।